International Journal of Sanskrit Research 2015; 1(2): 63-65

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2015; 1(2): 63-65
© 2015 IJSR
www.sanskritjournal.com
Received: 29-12-2014
Accepted: 30-01-2015

डॉ० ब्रजेन्द्र कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर संस्कृत विभाग
के0ए0 (पीजी) कॉलेज कासगंज (उ0प्र0)

Correspondence
डॉ० ब्रजेन्द्र कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर संस्कृत विभाग
के0ए0 (पीजी) कॉलेज कासगंज (उ0प्र0)

कालिदास के काव्यों में मानवीय मूल्यों की सर्जना

डॉ० ब्रजेन्द्र कुमार

शोध सारांश
मानव अपने भावों को व्यक्त करने के लिए जिस सार्थक मौखिकसाधन का प्रयोग करता है वह भाषा है। भाषा एक जीवन ज्योति है, जो एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से सम्बन्ध स्थापित करती है। यह भाषा ही वस्तुतः मानवशरीर में दैवी अंश है, जो इस सृष्टि में केवल मनुष्य को ही प्राप्त है।[1] यह दिव्यज्योति ही सम्पूर्ण संसार में अपना प्रकाश फैलाये हुए है। इस भाषा रूपी ज्योति के बिना संसार घोर अन्धकारमय हो जाता।[2] भाषारूपी इस दैवीअंश के द्वारा ही मनुष्य इस संसार में सर्वोत्तम जीव माना जाता है।
संस्कृत भाषा विश्व की समस्त परिष्कृत भाषाओं में प्राचीनतम है। भारतीयों के लिए तो यह वस्तुतः प्राणवाहिनी धारा है।[3] प्राचीनकाल से आज तक भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक तथा धार्मिक जीवन को यह भाषा तथा इसका साहित्य निरन्तर अनुप्राणित करता रहा है। संस्कृत भाषा का साहित्य अत्यन्त विस्तृत एवं समृद्ध है। साहित्य शब्द का अर्थ है– शब्द और अर्थ का मञ्जुल समन्वय **'साहितयोः शब्दार्थयोः भावं साहित्यम्।'**[4] साहित्य शब्द का प्रयोग काव्यादि के लिए किया जाता है। यहाँ यही अर्थ अभिप्रेत है। काव्य आदि मनोरंजन के साधन मात्र नहीं है अपितु मानव समाज एवं जीवन के लिए इसकी बहुत उपादेयता है। काव्य मनुष्य को रसोदधि में तो निमग्न कराता ही है, साथ ही कान्तासम्मित उपदेश के रूप में मानव जीवन को सुमार्ग की ओर प्रेरित भी करता है। संस्कृत साहित्य में नैतिकता पदे–पदे दृष्टिगोचर होती है। नीति को आचार व व्यवहार में परिणत करना ही नैतिकता है। नैतिकता से अभिप्राय उचित व अनुचित का निर्णय करके उसे वास्तविक जीवन में आत्मसात करना है। नैतिकता का सीधा सम्बन्ध धर्म एवं दर्शन से है। धर्म के अन्तर्गत त्याग, श्रद्धा, अतिथि–सत्कार, सेवा, अहिंसा एवं सत्य आदि आते है तथा दर्शन के अन्तर्गत न्याय, तर्क, प्रमाण, सदसद्विवेक आदि परिगणित होते है। नैतिक मूल्यों का वर्णन श्रुति, स्मृति, पुराण तथा आर्षकाव्यों में भी किया गया है। यथा–

''वृत्तं यत्नेन संरक्षेद् वित्तमायाति याति च।
अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हतः।।''[5]

भर्तृहरि ने तो साहित्य–काव्यादि से विहीन व्यक्ति को पशु के समान कहा है–

'साहित्यसंगीतकलाविहीनः साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः।'[6]
ऐसी विलक्षण परम्परा के समर्थ कवि कालिदास है, जिन्होंने प्रतिपद मानव मूल्यों के संरक्षण एवं संवर्द्धन में अपने साहित्य के माध्यम से श्रोताओं, अध्येताओं किं बहुना सामाजिक को कृतार्थ किया है। 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' कवि की प्रथित नाट्यकृति है, जो विश्व वाङ्मय में अत्यन्त समादृत है। इस कृति में कवि ने यज्ञ, दान, दया, तप, क्षमा, अतिथि सत्कार, प्रकृति प्रेम आदि नैतिक गुणों का उत्कृष्ट वर्णन किया है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् के नायक दुष्यन्त शौर्यसम्पन्न तथा धर्मप्रिय राजा के रूप में वर्णित है, जो अपने पूर्वजों के चरित्र से प्रेरणा ग्रहण कर कुलमर्यादा के संरक्षण तथा अभिवर्द्धन में संलग्न है। दुष्यन्त ने आद्योपान्त अपनी धर्मनिष्ठा का पालन किया है। ऋषियों की प्रार्थना को स्वीकार कर उन्होंने तपस्वियों के यज्ञ के रक्षाकार्य को सम्पन्न किया। आश्रम में प्रवेश के पश्चात् उनका आदर सत्कार किया जाता है। वहाँ अनुपम सौन्दर्य से विमण्डित शकुन्तला के प्रति आकृष्ट दुष्यन्त के सदाचारयुक्त मन में आत्मसंयम के प्रति पूर्ण विश्वास दिखता है–

''असंशयं क्षत्रपरिग्रहक्षमा यदार्यमस्यामभिलाषी मे मनः।
सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरण प्रवृत्तयः।।''[7]

इतना ही नहीं उन्होंने शकुन्तला को अविवाहित कन्या तथा विवाह योग्य जानने के पश्चात् ही गान्धर्व विवाह का प्रस्ताव रखा।

नैतिकमूल्यों के अन्तर्गत निर्लोभ को भी स्थान प्राप्त है। कालिदास के नायक दुष्यन्त में यह गुण भी विद्यमान है। वे अनुचित मार्ग से अपने कोष में वृद्धि नहीं करना चाहते है। जब वे निःसन्तान समुद्रव्यापारी धनमित्र नामक बनिये के नौका दुर्घटना में मरने का समाचार सुनते है वे उसके धन को कोष में मिलाना उचित नहीं समझते अपितु इस विषय की खोज करते है कि उस अमात्य की कितनी पत्नियाँ है? तथा क्या उसमें कोई गर्भवती है? 'समुद्रव्यवहारी सार्थवाहो धनमित्रो नाम नौव्यसने विपन्नः। अनपत्यश्च किल तपस्वी... ..।'[8] जब राजा को ज्ञात होता है कि साकेत के रहने वाले सेठ की पुत्री जो कि इसकी पत्नी है, उसका अभी ही पुंसवन संस्कार हुआ है। 'इदानीमेव साकेतकस्य श्रेष्ठिनो दुहिता निर्वृत्तपुंसवना जायास्य श्रूयते।'[9] तब राजा आदेश देता है कि निश्चय से वह गर्भ पिता के धन का अधिकारी होगा।

दुष्यन्त शासक के रूप में अपनी कर्त्तव्यनिष्ठता का अद्भुत निर्वाह करते है। प्रथम अङ्क में वह गज का उपद्रव सुनते ही रक्षार्थ तत्काल चल देते है। तथा जब दुष्यन्त शिकार करते हुए आश्रम के मृग का पीछा करते है तब वैखानस के द्वारा 'राजन्! आश्रममृगोऽयं न हन्तव्यो न हन्तव्यः।'**[10]** ऐसा कहने पर वह तुरन्त बाण उतार लेते है। सप्तम अङ्क में मारीच ऋषि के आश्रम में भी ऋषियों के प्रति उनका व्यवहार श्रद्धा को अभिव्यक्त करता है। प्रजावत्सल तथा दयावान दुष्यन्त अपनी प्रजाओं को स्वजनों के तुल्य मानकर प्रतिहारी को आदेश देते है कि मेरे राज्य में घोषणा करा दो कि जिसका जो सम्बन्धी मर गया हो, वह दुष्यन्त को अपना सम्बन्धी समझे–

''येन येन वियुज्यन्ते प्रजाःस्निग्धेन बन्धुना।
स स पापादृते तासां दुष्यन्त इति घुष्यताम्।।''[11]

एक सफल शासक के रूप में उसकी प्रसिद्धि राज्य में सर्वत्र व्याप्त है। उसका दावा है कि उसके शासन में कोई भी उद्दण्डता का आचरण नहीं कर सकता– 'कः पौरवे वसुमतिं शासति शासितरि दुर्विनीतानाम्0'[12] दुष्यन्त प्रजा का अपनी संतान के समान पालन करता है– 'प्रजा प्रजाः स्वा इव तन्त्रयित्वा0'[13]

दुष्यन्त में सदाचार का गुण प्रतिबिम्बित होता है। वह परस्त्रियों के प्रति कामुक दृष्टि नहीं रखता–'अनिवर्णनीयं परकलत्रं, अहो धर्मापेक्षिता भर्तुः....।'[14]

राजा दुष्यन्त के साथ–साथ शकुन्तला में भी नैतिक मूल्य कूट कूट कर भरे हुए हैं। शकुन्तला तपस्वियों के बीच पली बढ़ी है अतः उसमें नैतिक गुण नैसर्गिक रूप से चरमोत्कर्ष को प्राप्त है। तपोवन में रहते हुए उसके हृदय में जड़–चेतन सभी पदार्थों के प्रति स्नेह और सहानुभूति है। वह आश्रम के वृक्षों तथा पशु–पक्षियों को अपने सगे सम्बन्धी के समान समझती है और कहती है–

'न केवलं तातनियोग एवं अस्ति मे एतेषु सोदरस्नेहः।'[15]

तृण चरते समय आश्रम के मृगों के मुख कुश के द्वारा कटने पर उनके प्रति स्नेह और दया से युक्त भाव वाली शकुन्तला इंगुदी का तेल लगाकर उनके घावों को ठीक करने में तत्पर रहती थी। द्रवणशील हृदययुक्त शकुन्तला वन की लताओं, पुष्पों, पशु–पक्षियों की आत्मीयता से परिचर्या करती तथा उनके प्रति उसके हृदय में वात्सल्य का भाव भरा है।

शकुन्तला में क्षमाशीलता तथा आर्जवता का गुण भी स्पष्ट प्रतीत होता है। गान्धर्व विवाह करने वाले राजा के प्रति उसके मन में प्रेम का भाव है। पिता द्वारा प्रेषित किए जाने के पश्चात् पति द्वारा शापवशात् परित्याग किए जाने पर उसके मन में पति के प्रति क्रोध उभरता है। किन्तु क्षमाशील होने के कारण उसके हृदय में क्रोध देर तक टिकता नहीं और वह दुष्यन्त को दोष न देकर स्वयं को ही कोसती है– 'नूनं मे सुचरितप्रबन्धकं पुराकृतं तेषु दिवसेषु परिणाममुखमासीत्।'[16]

विदाई के समय वह लतारूपी बहनों से भी विदा लेकर जाना उचित समझती है तथा उसका आलिंगन करना चाहती है– 'तात! लताभगिनीं वनज्योत्स्नां तावदामन्त्रयिष्ये।'[17]

नायक दुष्यन्त, नायिका शकुन्तला के अतिरिक्त कालिदास के अन्य पात्रों में भी नैतिक मूल्यों का स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। महर्षि कण्व तपस्वी है जिनका हृदय तपोबल के कारण निर्मल तथा करूणा से प्लावित है। महर्षि कण्व ही माता–पिता से वियुक्त शकुन्तला का अपनी पुत्री के समान पालन–पोषण करते है। शकुन्तला के गान्धर्व विवाह कर लेने पर वह क्रोध नहीं करते अपितु उसका समर्थन करते है तथा शकुन्तला को पतिगृह प्रेषित करने की तैयारी करते है। शकुन्तला को विदा करते समय दुष्यन्त के प्रति उनके सन्देश सरल, स्वाभाविक तथा नैतिकता के अनुकूल है। वे शकुन्तला को अपने से बड़ों की सेवा करने के लिए कहते है। वे पति के साथ ही नहीं वरन् सपत्नियों के साथ भी सखी–सा व्यवहार करने का उपदेश देते है। इससे भी अधिक नैतिकता का उदाहरण क्या हो सकता है कि महर्षि कण्व शकुन्तला को उपदेश देते हुए कहते हैं–

''शुश्रूषस्व गुरून् कुरूप्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामा कुलस्याधयः।।''[18]

इस उपदेश में जो नैतिक मूल्य अन्तर्निहित है वे निर्धन स्त्री से लेकर धनवान की पत्नी तक के लिए समान रूप से उपादेय है। न केवल स्त्री के लिए अपितु सेवा, अक्रोध, सख्यभाव सभी के लिए अनुकरणीय है।

महर्षि कण्व में मानव स्वभावोचित सभी नैतिक गुण प्राप्त होते है। वे जानते है कि पुत्री पर पिता का अधिकार नहीं है। इसीलिए शकुन्तला को पतिगृह भेजकर उनको सन्तोष प्राप्त होता है– 'अर्थो हि कन्या परकीय एव...।'[19]

कविताकामिनी के कमनीयकान्त, संस्कृत नाट्य परम्परा के जाज्ज्वल्यमान नक्षत्र, कनिष्ठिकाधतिष्ठित कालिदास अपनी नाट्य प्रणयन परम्परा में प्रत्येक पात्र को आदर्श की कसौटी पर परखकर ही प्रस्तुत करते है। यथा कथंचित किसी पात्र से आदर्श प्रमाद हो जाता है तो उसे दण्ड देने में बिल्कुल संकोच नहीं करते। कालिदास में 'काव्येषु नाट्कं रम्यं अभिज्ञानशाकुन्तलम्' के आद्योपान्त अध्ययनोपरान्त नाट्यशास्त्र के नियमानुसार पात्रों का चित्रण हुआ है। उदात्त नायक, नैतिकता का प्रबल समर्थन करने वाली प्रियंवदा व अनुसूया का मूर्त स्वरूप एवं साक्षात् नैतिकता के अधिष्ठात्री रूप में शकुन्तला का चित्रण कर कालिदास ने इस नाटक का प्रणयन किया। इस नाटक में आदर्श सखी, आदर्श धर्ममाता एवं आदर्श धर्मपिता का चित्रण करने में कवि सर्वथा समर्थ है। महर्षि कण्व तपोधन होते हुए भी जब नैतिकता का उपदेश शकुन्तला को दे रहे होते है तो ऐसा प्रतीत होता है कि विश्व का सम्पूर्ण जनमानस इनके उपदेश को ग्रहण कर रहा है। अतः हम मुक्तकंठ से कह सकते है कि प्रथित यश महाकवि की यह अप्रतिम कृति सम्पूर्ण देश, काल तथा खण्ड में आदर्श, नैतिकता, धर्म, संस्कृति, परम्परा एवं मर्यादा का आश्रय रहेगी जिससे यह सहृदय समाज अहर्निश उपकृत होता रहेगा।

कालिदास ने अपने अप्रतिम ग्रन्थरत्न 'मेघदूत' में मानवीय मूल्यों के उच्चतम स्वरूपों की अभिव्यक्ति सुतरां की है। मेघ से सन्देशवाहक बनने का अनुरोध करते हुये वर्णन किया है हमें गुणीजन से ही याचना करना ठीक है, चाहे वह याचना असफल ही क्यों न हो जाये। अधम से भाँगना उचित नहीं।

याञ्चा मोघा वरमधिगुणे नाऽधमे लन्धकामा।[20]

यात्रामार्ग में आम्रकूट पर्वत मेघ का पूर्वपरिचित सुहृद् है अतः मित्र की उपेक्षा करके उससे बिना मिले निकल जाना कथमपि उचित न होगा।

प्राप्ते मित्रे भवति विमुखः किं पुनर्यस्तथोच्चैः।[21]

अनेक बार मेघ अपनी थकान मिटाने के लिए उस पर्वत पर आश्रय ले चुका है किन्तु आज उस मित्र की कुशलक्षेम न पूँछना स्वार्थ की पराकाष्ठा होगी।

व्यक्ति जब ज्ञान एवं अनुभवादि आन्तरिक सम्पदाओं से परिपूर्ण होता है तो वह गुरुतापूर्ण होता है वहीं इसके विपरीत ज्ञानादि की रिक्तता उसे लघु या क्षुद्र बनाती है इसी तथ्य को ध्यान में रखकर यक्ष मेघ को जलग्रहण करने को कह रहा है–

रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः पूर्णता गौरवाय।[22]

जंगल में लगी दावाग्नि को मेघ अपनी बूँदों से बुझाकर उसमें रहने वाले प्राणियों की रक्षा करें क्योंकि संकटग्रस्त लोगों की सहायता करना उत्तमजनों का पुनीत कर्त्तव्य है–

आपनार्तिप्रशमनफलाः सम्पदो ह्युत्तमानाम्।[23]

इस प्रकार कालिदास ने अपने इस ग्रन्थ में अनेक मानवीय मूल्यों का मार्मिक समाश्रयण किया है।

कालिदास के रघुवंशमहाकाव्य में विभिन्न प्रसंगों में मानवीय मूल्यों की सुन्दर अभिव्यंजना की गयी है। उदाहरण के लिए कतिपय प्रसंगों पर दृष्टिवीक्षण किया जा सकता है–

राजा दिलीप और रानी सुदक्षिणा वशिष्ठाश्रम को जिस मार्ग से जाते हैं वहाँ मार्ग में वृद्ध घोषी ताजा मक्खन लेकर, उनकी सेवा में उपस्थित होते हैं। राजा उनसे बड़ी आत्मीयता से मिलते हैं तथा मार्ग में पड़ने वाले लतावृक्षों आदि के विषय में पूछते हैं जो कि उनकी उदारचेतता एवं सरलता का परिचय देता है।

हैयंगवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्।
नामधेय नि पृच्छन्तौ वन्यानां मार्गशाखिनाम्।।[24]

वशिष्ठाश्रम के स्नेह, शान्ति, पवित्रता और विश्वास का जो रूप महाकवि ने प्रस्तुत किया व बेजोड़ है। वर्णन में स्नेह और विश्वास का क्या अलौकिक रूप दिखाई पड़ता है। तपोवन के मृगों को ऋषि पत्नियों से इतना स्नेह और वात्सल्य मिला है कि वे नीवार के दाने खाने के लिए सायंकाल को उनकी पर्णकुटियों के द्वार पर लाड़ले बच्चों की तरह रास्ता रोके खड़े हैं।

आकीर्णऋषिपत्नीनामुटजद्वाररोधिभिः।
अपत्यैरिव नीवारभागधेयोचितैर्मृगैः।।[25]

पुत्र की कामना से राजा दिलीप वशिष्ठ की गौ नन्दिनी की सेवा में लगे हैं दिनभर जंगल में उसे चराने के बाद सायंकाल उसके पीछे–पीछे थके माँदे लौटते हुये राजा दिलीप को उनकी पत्नी रानी सुदक्षिणा उनके रूप को अपलक देखती हुई बहुत देर पीती रहीं। यह वर्णन उन दोनों के दाम्पत्यस्नेह की एक मधुर झाँकी प्रस्तुत करता है।

वशिष्ठधेनोरनुयायिनं तमावर्त्तमानं वनिता वनान्तात्।
पपौ निमेषालसपक्ष्मपंक्तिरूपोषिताभ्यामिव लोचनाभ्याम्।।[26]

अश्व–संरक्षण के प्रसंग में वीर रघु ने इन्द्र को चुनौती दी है। एक मानव निर्भय रूप से हँसते हुये इन्द्र को ललकार कर कह रहा है– "पुरंदर! यदि आपने निश्चय कर लिया है कि आप अश्वमेध के घोड़े को वापस नहीं देंगे तो शस्त्र उठाइये और युद्ध के लिए तैयार हो जाइये। रघु को पराजित किए बिना उसका घोड़ा ले जायें यह सम्भव न होगा।" इन्द्र की शक्ति को जानते हुये भी रघु उनसे युद्ध को प्रस्तुत है कितना अद्भुत शौर्य है।

ततः प्रहस्यापभयः पुरंदरं पुनर्बभाषे तुरगस्य रक्षिता।
गृहाण शस्त्रं यदि सर्ग एष ते न खल्वनिर्जित्य रघुं कृती भवान्।।[27]

इस प्रकार कालिदास के सम्पूर्ण साहित्य में मानवीय मूल्यों को बहुत ही सुन्दर रीति से गुम्फित किया गया है। सम्भवतः ऐसा कोई ही गुण हो जो कि उनके द्वारा वर्णित होने से शेष बचा हो। इसलिए हम कविकुलगुरू की वाणी को प्रणाम करते हैं।

संदर्भ

1. वाग्रूपता चेदुत्क्रामेदेवबोधस्य शाश्वती। न प्रकाशः प्रकाशेत सा हि प्रत्यवमर्शिनी ।। वाक्यपदीय 1.124।
2. इदमन्धन्तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसार न दीप्यते।। काव्यादर्श 1.4।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ. प्रीति प्रभा गोयल राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर, पृ.1
4. काव्यमीमांसा, राजशेखर
5. महा.उ.प. 4/30
6. नीतिशतकम् डॉ. आनन्द कुमार पाठक, श्लोक–13
7. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, डॉ. कृष्ण कुमार, 1/21
8. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, डॉ. कृष्ण कुमार, अङ्क षष्ठ, कथन–राजा. ...।
9. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, डॉ. कृष्ण कुमार, अङ्क षष्ठ, कथन–प्रतीहारी.....।
10. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, डॉ. कृष्ण कुमार, अङ्क प्रथम, कथन–वैखानस.....।
11. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, डॉ. कृष्ण कुमार, अङ्क षष्ठ, श्लोक 23
12. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/25
13. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 5/5
14. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 5
15. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, अङ्क चतुर्थ, कथन–शकुन्तला
16. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, अङ्क चतुर्थ,
17. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, अङ्क चतुर्थ, कथन–शकुन्तला
18. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4/18
19. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4/22
20. मेघदूत, श्लोक–6।
21. वही, श्लोक–17।
22. वहीं, श्लोक–20।
23. वहीं, श्लोक–53।
24. रघुवंशमहाकाव्यम्, 1–45।
25. वही, 1–50।
26. वही, 2–19।
27. वही, 3–51।